Impact Factor (SJIF): 6.092 E-ISSN: 2583-1615

International Journal of Research in Academic World

Received: 09/July/2024 IJRAW: 2024; 3(8):163-166 Accepted: 14/August/2024

भारतीय उच्च पुरापाषाणिक संस्कृति के खोज का इतिहास

*[1]डॉ. विनोद यादव

*[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, राजकीय महाविद्यालय मंगरौरा, प्रतापगढ, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश

मानव के प्रारम्भिक काल के विषय में जो भी पुरातात्विक साक्ष्य मिलते हैं, उनमें पाषाण निर्मित उपकरणों की विशेष महत्ता है, क्योंकि मानव अपने जीवन यापन के लिए इन्हीं उपकरणों का प्रयोग करता था और इन्हीं के द्वारा वह आखेट और संग्रह का कार्य भी करता था। इन उपकरणों की प्रधानता के कारण इस काल को पाषाण काल कहा जाता है। इन पाषाण कालीन संस्कृतियों को सांस्कृतिक अवस्था एवं स्तरीकरण के आधार पर तीन वर्गो में विभाजित किया गया है–पुरापाषाण काल, मध्य पाषाण काल और नव पाषाण काल। पुनः पुरापाषाण काल को स्तरीकरण एवं सांस्कृतिक विभाजन के कारण तीन उपभागों में बाँटा गया है–निम्न पुरापाषाण काल, मध्य पुरापाषाण काल और उच्च पुरापाषाण काल। आधुनिक मानव के उद्भव और तकनीकी विकास से सम्बन्धित प्रारम्भिक काल का नाम उच्च पुरापाषाण काल है। स्तर विन्यास के अनुसार उच्च पुरापाषाण काल मध्य पुरापाषाण काल के बाद तथा मध्य पाषाण काल के पहले आता है। मानव विकास के इतिहास के दृष्टिकोण से उच्च पुरापाषाण काल का विशेष महत्व है। इस काल में मेधावी मानव (होमो सेपियंस सेपियंस) के विकास के साथ ही मानव के सांस्कृतिक विकास का नवीन स्वरूप उभर कर सामने आता है। मध्य पुरापाषाणिक मुस्तीरियन और लेवॉलोइसियन संस्कृति के पश्चात् आरम्भ होने वाली पाषाण परम्परायें उच्च पुरापाषाण काल के अन्तर्गत सम्मिलित की जाती हैं। यह काल सांस्कृतिक एवं प्रजातीय दोनों ही दृष्टियों से उल्लेखनीय परिवर्तनों के लिए प्रसिद्ध रहा है। इस काल में मानव के सांस्कृतिक विकास में अपूर्व गतिशीलता आ जाती है। इस काल में मानव समाज का गठन पूर्ववर्ती कालों से अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली लगता है। यह काल मानव के कलात्मक ज्ञान की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। इस काल की तकनीकी प्रगति को देखने से स्पष्ट पता चलता है कि मानव गतिविधियों की विविधता में विशिष्टता का समावेश हो गया था।

मुख्य शब्दः पल्लवरम्, सुब्बाराव, बेलन घाटी, भीमबैठका।

प्रस्तावना

भारत में प्रागैतिहासिक काल से सम्बंधित अनुसंधान कार्य व्यवस्थित रूप से उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आरम्भ हुआ। इस सम्बन्ध में सबसे उल्लेखनीय तथा पुरोगामी कार्य राबर्ट ब्रूस फूट का था। ये भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण विभाग में भू–तत्ववेत्ता थे। इन्होंने तमिलनाडु में पल्लवरम् नामक स्थान के लैटेराइट ग्रैवेल से पहला वास्तविक पूर्ण पाषाण कालीन उपकरण 13 मई सन् 1863 ई0 को खोजा था। [1] इस प्रकार ब्रूस फूट ने भारत में न केवल प्रस्तर युगीन उपकरणों के संकलन का ही श्री गणेश किया, अपितु प्रागितिहास के अध्ययन की दिशा में प्रथम ठोस चरण उठाया। इसके पूर्व भारत में इन उपकरणों की ओर किसी का भी ध्यान आकर्षित नहीं हुआ था। इसीलिए ब्रूस फूट को ही प्रायः 'भारतीय प्रागितिहास का जनक' कहा जाता है। [2]

भारत में बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक तक भारतीय उच्च पुरापाषाण काल की स्थिति संदिग्ध थी, क्योंकि उस समय तक स्पष्ट स्तरित जमाव प्रकाश में नहीं आये थे। दिवंगत बी. सुब्बाराव की धारणा थी कि भारतीय प्रस्तर युग में यूरोप के उच्च पुरापाषाण काल के समान कोई युग नहीं हुआ। उनके अनुसार यहाँ की स्थिति भी लगभग वैसी ही होनी चाहिए, जैसी की अफ्रीका में थी,

*Corresponding Author: डॉ. विनोद यादव

जहाँ पर मध्य पाषाण कालीन उद्योगों का विकास मध्य पुरापाषाण युगीन लेवॉल्वा उद्योगों से सम्बन्धित है। उनकी उपर्युक्त धारणा का आधार भारत में उच्च पुरापाषाणिक स्थलों का अभाव तथा भारत और अफ्रीका की जलवायुगत समानता थी। दिसम्बर 1961 ई0 में दिल्ली में आयोजित आर्कियालॉजी की 'प्रथम एशियन कांग्रेस' में उन्होंने यह प्रस्ताव रखा कि भारत में यूरोपीय शब्दावली का प्रयोग उचित नहीं है, जिसमें मध्य पुरापाषाण काल के बाद तथा मध्य पाषाण काल के पहले उच्च पुरापाषाण काल आता है। अतः भारत में अफ्रीका की शब्दावली–Early Stone Age, Middle stone Age तथा Late Stone Age का प्रयोग करना चाहिए। [3] सुब्बाराव का उपर्युक्त प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया। फलतः भारतीय प्रागैतिहासिक में Early Stone Age (प्रारम्भिक पाषाण काल), Middle Stone Age (मध्य पाषाण काल) तथा Late Stone Age (उत्तर पाषाण काल) का प्रयोग होने लगा। परन्तु प्रागितिहास के क्षेत्र में काम करने वाले अनेक विद्वान सुब्बाराव के मत से सहमत नहीं थे तथा समय–समय पर उन्होंने अपनी असहमति व्यक्त किया। 1964 ई0 में पुणे में आयोजित सेमिनार में उच्च पुरापाषाण काल पर कोई भी लेख नहीं पढ़ा गया, क्योंकि उस समय तक भी इसकी स्थिति संदिग्ध मानी जाती थी, यद्यपि भारत में प्रागितिहास के अध्ययन के आरम्भ से ही ऐसे स्तरों तथा ऐसे उद्योगों की घोषणाएं समय–समय पर होती रही है, जिन्हें उच्च पुरापाषाण कालीन कहा गया था।

इसी क्रम में सर्वप्रथम कामियाडे तथा बर्किट [4] उन पुरोगामी विद्वानों में से थे, जिन्होंने 1930 ई0 में इन उद्योगों की घोषणा भारत के दक्षिण–पूर्वी तट (आंध्रप्रदेश में कृष्णा घाटी) से की थी। इन विद्वानों ने अपने सीरीज–III के अन्तर्गत ब्लेड–ब्यूरिन उद्योगों को ही रखा था। ये उपकरण जिस स्तर से उपलब्ध हुए थे, वह मध्य पुरापाषाणिक स्तर (सीरीज–II) के ऊपर तथा लघु पाषाणोपकरणों (सीरीज–IV) के नीचे के स्तर से प्राप्त हुए थे।

इसी क्षेत्र से कालान्तर में इजाक [5] तथा सौन्दरराजन [6] ने भी ऐसे उपकरणों का संग्रह किया, जिसे प्रारूपात्मक दृष्टिकोणों से कामियाडे तथा बर्किट के तृतीय श्रेणी के उपकरणों के समकक्ष रखा जा सकता था। कठिनाई मात्र इतनी थी कि इन विद्वानों को उपकरण उस प्रकार के भू–वैज्ञानिक स्तरों से उपलब्ध नहीं हुए थे, जैसे कि कामियाडे आदि को मिले थे, अतः उस पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया।

के.आर.यू. टॉड [7] ने 1939 ई0 में मुंबई के 'खाण्डिवली' नामक स्थान से इसी प्रकार के उद्योगों की घोषणा की थी। किन्तु कालान्तर में सांकालिया तथा उनके सहयोगियों ने टॉड के अनुभागों का पुनः सर्वेक्षण किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि टॉड की घोषणा सम्यक साक्ष्यों पर आधारित नहीं थी।

1964 ई0 के बाद से स्थिति में परिवर्तन होने लगा और ऐसे बहुत से ऊपरी सतह के स्थल तथा स्तरित जमाव प्रकाश में आने लगे जिनसे उच्च पुरापाषाण काल की स्थिति की संदिग्धता में सुधार होने लगा। इस सम्बन्ध में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के प्रो0 जी.आर. शर्मा तथा उनके सहयोगियों के प्रयास अत्यन्त प्रशंसनीय हैं। इन्होंने मिर्जापुर, वाराणसी, इलाहाबाद (बेलन नदी घाटी) उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश के सीधी जिले के सिहावल (सोन घाटी) के निकट से अनेक प्रस्तर युगीन उद्योग स्थलों को खोज निकाला, [8] जहाँ पर ब्लेड–ब्यूरिन उद्योगों के उपकरण स्तरित जमावों से प्राप्त हुए। सन् 1965 से 1970 ई0 के मध्य इनका सबसे महत्वपूर्ण कार्य इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश) जिले के दक्षिणी अंचल में बेलन घाटी का सर्वेक्षण था।

जिस समय इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रो0 जी0आर0 शर्मा और उनके सहयोगी बेलन नदी घाटी और उससे सम्बंधित क्षेत्र में अनुसंधान कार्य करने में व्यस्त थे, उसी समय दकन कालेज, पुणे के पुरातत्वविद् के0 पदैय्या [9] और एम.एल.के.मूर्ति [10] भारत के दक्षिण–पूर्वी तट (आन्ध्र प्रदेश) और शोरापुर दोआब (कर्नाटक) का क्रमिक अन्वेषण करके सम्बंधित उद्योगों को खोज निकाला। इसी क्रम में एस.ए. साली [11] को महाराष्ट्र में पटने से, अलचिन तथा गुडी [12] को बूढ़ा पुष्कर क्षेत्र गुजरात से इस उद्योग के निश्चित प्रमाण मिले। उपर्युक्त सभी स्थलों से प्राप्त उपकरणों को उनकी प्रारूपात्मक समानता तथा उनके प्राप्ति स्तर के आधार पर उच्च पुरापाषाण कालीन कहा गया।

इसके अतिरिक्त इस सम्बन्ध में और अधिक सामग्री मध्य प्रदेश में भीमबैठका शिलाश्रय से प्रकाश में आयी। भीमबैठका की पहाड़ियों में स्थित गुफाओं तथा शिलाश्रयों को सन् 1958 ई0 में खोजने का श्रेय वी.एस. वाकणकर महोदय को है। [13] सन् 1973–76 ई0 के बीच दकन कालेज, पुणे के पुरातत्व विभाग के वी.एन. मिश्र ने भीमबैठका में शिलाश्रय संख्या–III, एफ–23 का उत्खनन कार्य कराया। [14] शिलाश्रय के अन्दर लगभग 52 वर्ग मीटर क्षेत्र में उत्खनन कार्य कराया गया, जिससे 3.80 मीटर मोटा जमाव प्रकाश में आया, जिसको 8 स्तरों में विभाजित किया गया है। निम्न पुरापाषाणिक एश्यूलॅन उपकरण इनमें से सबसे निचले तीन स्तरों (6–8) से मिले हैं, जिनका कुल जमाव 2.50 मीटर है। पाँचवें स्तर से मध्य पुरापाषाणिक और चौथे स्तर से उच्च पुरापाषाणिक उपकरण एवं अन्य पुरावशेष मिले हैं। तृतीय से लेकर प्रथम स्तर तक का जमाव मध्य पाषाण काल की संस्कृति से सम्बन्धित हैं। भीमबैठका के उत्खनन का विशेष महत्व यह है कि यहाँ पर परवर्ती एश्यूलॅन (Late Acheulian) से लेकर मध्य पाषाण काल तक का एक अविछिन्न सांस्कृतिक क्रम प्रकाश में आया है।

भीमबैठका शिलाश्रय का महत्व पाषाण युगीन संस्कृतियों के विकास के साथ मानव के कलात्मक साक्ष्यों के मिलने के कारण और भी बढ़ जाता है। वी.एस. वाकणकर को भीम बैठका की गुफा संख्या प्प्।–28 से हरे रंग के पिण्ड के कतिपय टुकड़े प्राप्त हुए थे। वाकणकर ने ऐसी संभावना प्रकट की थी कि इन टुकड़ों का उपयोग

चित्रकारी के लिए रंग तैयार करने के लिए होता रहा होगा। भीमबैठका की गुफाओं में मिले कतिपय चित्र इसके प्रमाण हैं। [15] हरे रंग के 'पिगमेंट' से निर्मित चित्रों को वे प्राचीनतम मानते हैं और उच्च पुरापाषाण काल से सम्बन्धित करते हैं। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि विन्ध्य क्षेत्र के शिलाश्रयों में बने हुए कतिपय चित्र उच्च पुरापाषाण कालीन होगें।

उच्च पुरापाषाण कालीन मानव की एक अनोखी कलाकृति हड्डी से निर्मित मातृदेवी की मूर्ति है, [16] जो बेलन नदी घाटी क्षेत्र में स्थित लोंहदा नामक नाले के तृतीय ग्रैवेल के अपरदित जमाव से मिली है। यह इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग की एक अनोखी खोज है। महाराष्ट्र के पटणे नामक पुरास्थल से शुतुरमुर्ग के तीन अण्डकवकों पर आड़ी–तिरछी रेखाओं से युक्त बने हुए अलंकरण भी उच्च पुरापाषाण कालीन मानव के कलात्मक विकास पर प्रकाश डालते हैं। [17] इस प्रकार उपर्युक्त तथ्यों के अवलोकन से उच्च पुरापाषाणिक मानव की कलात्मक अभिरूचि के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

भारतीय उच्च पुरापाषाणिक संस्कृति को उसका उचित स्थान दिलाने का श्रेय इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग को है। यह इसलिए क्योंकि सन् 1965–70 ई0 के बीच प्रो0 जी.आर. शर्मा तथा उनके सहयोगियों ने इलाहाबाद जिले (उत्तर प्रदेश) के दक्षिणी अंचल में स्थित बेलन नदी घाटी का विस्तृत अन्वेषण किया। [18] बेलन घाटी में जिस प्रकार से प्रस्तर युगीन संस्कृतियों का क्रमिक विकास स्तरित जमावों से मिला, वैसा भारत में अभी तक कहीं नहीं मिला था। यहाँ पर प्रथम ग्रैवेल से हैण्डएक्स–क्लीवर–स्क्रेपर अथवा निम्न पुरापाषाण काल के उपकरण, द्वितीय ग्रैवेल से ब्लेड–फलक–स्क्रेपर अथवा मध्य पुरापाषाण काल के उपकरण तथा तृतीय ग्रैवेल से ब्लेड–ब्यूरिन प्रकार अथवा उच्च पुरापाषाण काल के उपकरण प्राप्त हुए। इसके अतिरिक्त इन विभिन्न प्रकार के उपकरणों में एक निश्चित विकासात्मक क्रम भी देखा गया।

भारत के विभिन्न भागों से जब एक ही प्रकार की सामग्री लगभग समान स्तरों से प्रकाश में आने लगी तब विद्वानों के लिए उच्च पुरापाषाण कालीन समस्या पर पुनर्विचार आवश्यक हो गया। टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ फण्डामेंटल रिसर्च, मुंबई में 1972 ई0 में आयोजित 'कार्बन–14 तथा इण्डियन आर्कियालॉजी अन्तर्राष्ट्रीय सिम्पोजियम' [19] में बेलन घाटी में प्राप्त साक्ष्यों के प्रतिवेदन के फलस्वरूप इस समस्या का समाधान मान लिया गया और वहाँ पर उपस्थित विद्वानों ने भारतीय प्रागैतिहास में उच्च पुरापाषाण काल की स्थिति को स्वीकार कर लिया। सन् 1974 ई0 में दकन कालेज, पुणे में आयोजित 'प्रीहिस्ट्रीः 1974' के सेमिनार में भारतीय उच्च पुरापाषाण काल को उसका उचित स्थान प्राप्त हुआ। [20]

निष्कर्ष

इस प्रकार भारतीय उच्च पुरापाषाणिक संस्कृति के स्पष्टतः प्रकाश में आने तथा विद्वानों द्वारा मान्यता प्रदान करने के बाद सुब्बाराव आदि विद्वानों की उस धारणा का खण्डन हुआ, जिसमें कि अफ्रीका की तरह भारत में भी मध्य पाषाण कालीन उद्योगों का विकास मध्य पुरापाषाण युगीन लेवॉल्वा उद्योगों से सम्बन्धित है। साथ ही भारतीय प्रागैतिहास में अफ्रीका की शब्दावली–Early Stone Age, Middle Stone Age, तथा Late Stone Age का प्रयोग भी बन्द हो गया। अतः अब यह मत निर्विवाद रूप से स्वीकार किया गया कि यूरोप के ही समान भारतीय उपमहाद्वीप में भी मध्यपाषाण कालीन लघुपाषाणोपकरण उद्योगों का विकास ब्लेड–ब्यूरिन संस्कृति अथवा उच्च पुरापाषाण काल से सम्बन्धित है। इस आधार पर भारतीय प्रागैतिहासिक संस्कृतियों का नामकरण यूरोपीय संस्कृतियों के अनुरूप किया जाने लगा। इस प्रकार पुरापाषाण काल को स्तरीकरण और सांस्कृतिक विकास की अवस्थाओं के आधार पर तीन उपभागों निम्न पुरापाषाण काल, मध्य पुरापाषाण काल तथा उच्च पुरापाषाण काल में बाँटा गया और भारत में भी उच्च पुरापाषाणिक संस्कृति के बाद मध्यपाषाणिक संस्कृति की स्थिति को स्वीकार किया गया।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. फूट, आर.बी., 1866, ऑन द अकरेंस ऑफ स्टोन इम्प्लीमेंट्स इन लैटेराइटिक फारमेशन इन वैरियस पार्ट्स ऑफ द मद्रास एण्ड नार्थ आरकोट डिस्ट्रिक्स्, मद्रास, जर्नल ऑफ लिटरेचर एण्ड साइंस–XIV (सीरीज–3, पार्ट–2), पृ.1–31.
2. पाण्डेय, जे. एन., 2002,पुरातत्व विमर्श, प्राच्य विद्या संस्थान, इलाहाबाद, पृ.–204.
3. सुब्बाराव, बी.,1958,द पर्सनालिटी ऑफ इण्डिया, एम. एस. यूनिवर्सिटी ऑफ बड़ौदा, बड़ौदा,पृ.–39.
4. कामियाडे, एल.ए. एण्ड एम.सी. बर्किट, 1930, फ्रेश लाइट ऑन द स्टोन एजेज इन साउथ ईस्ट एशिया, एंटीक्यूटी.IV,पृ.327–39.
5. इजाक, एन., 1960,द स्टोन एज कल्चर ऑफ कुरनूल, पी–एच.डी. डिजरटेशन, यूनिवर्सिटी ऑफ पुणे.
6. सौंदरराजन, के.वी., 1952, स्टोन एज इण्डस्ट्रीज नियर गिद्दलूर, डिस्ट्रिक कुरनूल,ऐन्सीऐंट इंडिया–8, पृ.64–73.
7. टॉड, के.आर.यू., 1939,पैलियोलिथिक इण्डस्ट्रीज ऑफ बाम्बे,जर्नल ऑफ द रॉयल एन्थ्रोपोलोजिकल इन्स्टीट्यूट वाल्यूम–69, पृ.257–272.
8. शर्मा, जी.आर., 1967,एक्सप्लोरेशन्स इन इलाहाबाद, मिर्जापुर एण्ड शाहजहाँपुर डिस्ट्रिक्स, अप्रकाशित रिपोर्ट.
9. पदैय्या, के.,1970,द ब्लेड टूल इन्डस्ट्रीज ऑफ शोरापुर दोआब, इंडियन एंटीक्यूरी–4: प्रो0 एच.डी. सांकलिया फेलिसीटेशन वॉल्यूम, पापुलर प्रकाशन, मुंबई, पृ.165–90.

10. मूर्ति, एम.एल.के., 1968, ब्लेड एण्ड ब्यूरिन इन्डस्ट्रीज नियर रेनिगुंटा ऑन द साउथ इस्ट कोस्ट ऑफ इण्डिया,प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्रीहिस्टारिक सोसाइटी–34, लंदन, पृ.83–101.
11. साली, एस.ए., 1974, अपर पैलियोलिथिक रिसर्च सिन्स इनडिपेन्डेंस, बुलैटिन ऑफ द दकन कालेज रिसर्च इन्स्टीट्यूट, वॉल्यूम 34(1–4), पृ. 154–8.
12. अलचिन, बी. एण्ड ए. गुडी, 1971, ड्यून्स, एरिडिटी एण्ड अर्ली मैन इन गुजरात, वेस्टर्न इण्डिया, मैन, वॉल्यूम–5(2), पृ.248–65.
13. वाकणकर, वी.एस., 1978, द डॉन ऑफ इण्डियन आर्ट,आकार–4,पृ. 6–9.
14. मिश्रा, वी.एन., 1989, स्टोन एज इण्डियाः एन इकोलॉजिकल पर्सपेक्टिव, मैन एण्ड इनवायरनमेंट, वॉल्यूम–14, पृ.17–54.
15. मिश्रा, वी.एन. एण्ड वाई.मठपाल, 1979, रॉक आर्ट ऑफ भीमबैठका रीजन, सेन्ट्रल इण्डिया, मैन एण्ड इनवायरनमेंट–III,पृ.23–24.
16. शर्मा, जी.आर., 1973, स्टोन एज इन द विन्ध्याज एण्ड द गंगा वैली, रेडियोकार्बन एण्ड इण्डियन आर्कियोलॉजी (सं0–डी.पी. अग्रवाल एण्ड ए.घोष),टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ फण्डामेंटल रिसर्च, मुबई, पृ. 106–10.
17. साली, एस.ए., 1989,द अपर पैलियोलिथिक एण्ड मेसोलिथिक कल्चर ऑफ महाराष्ट्र, दकन कालेज, पुणे.
18. इंडियन आर्कियोलॉजीः ए रिव्यू, 1966–67, आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, पृ. 35–37.
19. अग्रवाल डी.पी. एण्ड ए. घोष (सं0), 1973,रेडियोकार्बन एण्ड इण्डियन आर्कियोलॉजी, टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ फण्डामेंटल रिसर्च, मुंबई.
20. वर्मा, आर.के., 1977, भारतीय प्रागैतिहासिक संस्कृतियाँ, परम ज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 57.